प्रवचन नं. ५२ श्लोक-४ ता. ५-८-७८ शनिवार श्रावण सुदी-२ सं.२५०४

`उभयनय विरोध ध्वंसिनि' कहा है न ? इसका स्पष्टीकरण करते हैं। जिन वचन वह स्याद्वादरूप है, अपेक्षा से कथन करता है। स्पष्टीकरण आयेगा अभी, जब दो नयों के विषय में विरुद्ध है, क्योंकि एक वस्तु त्रिकाली भी है और उसकी पर्याय भी है। यह वस्तुका स्वरूप है, पर्याय है यह व्यवहारका विषय है, द्रव्य है यह निश्चयनयका विषय है। दोनों का विषय विरुद्ध है, फिर भी दो नय है। विषय का विरोध है, फिर भी दो नय है। क्योंकि जो वस्तु नित्यप्रभु है, आत्मा जिनस्वरूप में नित्य है। ऐसे नित्य का निर्णय करनेवाली और ध्यान करनेवाली पर्याय, यह तो पर्याय है। समझे कुछ ? जो वस्तु नित्य है, यह भगवानआत्मा जिन स्वरूप में नित्य है। जिन स्वरूप ही स्वयं है, यह नित्य है परंतु यह नित्य है इसका निर्णय करनेवाला कौन ? नित्य निर्णय करें ? यह पर्याय निर्णय करे, यह पर्याय है वह अनित्य है। वस्तु स्वयं नित्य है। अर्थात जिनवाणी (में) इसप्रकार दो नयों का विरोध होनेपर भी, उसका समाधान करते हैं। यहाँ तो आत्मा ऊपर घटाते है और यहाँ आत्मा ऊपर की बात है न ? जिनवचन में रमंति।

जिनवचन में द्रव्य जो जिनस्वरूपी वीतराग मूर्ति प्रभु है यह उपादेय है, यह तो पर्याय हुई, यह उपादेय है - ऐसा जो निर्णय, यह तो पर्याय हो गई। उपादेय वस्तु, समझे कुछ ? जिनवचन में दो नयों में विरोध कहकर जो निश्चय है, उसे आदरणीय बताता है, और आदरणीय करता है कौन ? कि पर्याय। सूक्ष्मविषय बापू ! बहुत अलौकिक बात (है)। यह जैनधर्म के अलावा कहीं भी यह बात हो सकती ही नहीं। जो जिनस्वरूपी प्रभु है, वीतराग बिम्ब चैतन्य है। परंतु यह वीतराग बिम्ब है, यह तो नित्य और ध्रुव है। अब यह निश्चयनय का विषय तो ध्रुव है। तब इसका निर्णय करनेवाली यह पर्याय है, यह पर्याय है, न हो तब तो इसका निर्णय कौन करे ? नित्य-अनित्य वस्तु का स्वरूप ही है। भगवान ने कहीं धर्म कहा यह कहीं पक्ष से कहा नहीं। यह तो जैसा वस्तु का स्वरूप है उस प्रकार उन्होने बताया समझे कुछ ? आहाहा !

अर्थात जो नित्यप्रभु है और इसमें भी आया न ? ४७ गाथा द्रव्य संग्रह `दुवियंपि मोख हेयु झाणे पाहुडे णियमा' आहाहा ! गजब बात करते है न ? क्या कहते हैं यह। भगवानआत्मा जिनस्वरूपी जिनबिम्ब ही स्वयं परमात्मा स्वरूप ही है यह। आहा !

उसका जो ध्यान करे अर्थात की उस तरफ की एकाग्रता करे, वह मोक्षमार्ग, यह तो पर्याय हुई, वस्तु है उसका जो घ्यान करे एकाग्रता, यह तो नई पर्याय हुई, यह त्रिकाली चीज न रही। विषय इसका त्रिकाली। समझे कुछ ? आहाहा ! `दुवियंपि मोक्ष हेयु झाणे पाहुडे णियमा' जैनदर्शन जिनस्वरूप आत्मा उसका जो लक्ष्य करना, एकाग्रता करना यह इसका ध्यान और यह ध्यान यह पर्याय है। आहाहा ! अब यहाँ मोक्षमार्ग दो प्रकार से कहा। अर्थात एक ही वस्तु तो निश्चय मोक्षमार्ग वही मोक्षमार्ग है। दूसरा तो रागादिक उसे आरोप से उसका कथन करके और वह निश्चय जो सम्यग्ज्ञान है, यह त्रिकाली जिनस्वरूप ने आश्रय हुआ, ध्रुव के आश्रय से हुई जो पर्याय इस पर्याय में स्वपरप्रकाशक स्वभाव होने से, यह स्व ने जाने और राग बाकी रहा है और व्यवहार मोक्षमार्ग कहा। परंतु उसे यह जाने, उसको जाने यह भी नहीं। वास्तव में उसे जानना और स्व को जानना स्वपरप्रकाशक, स्वयं सिद्ध पर्याय होने से वह व्यवहारनय का विषय है। अरे ! अरे ! ऐसी बातें हैं धन्नालालजी ! वस्तु ही ऐसी है और जैनधर्म कोई पक्ष, घेरा नहीं, यह तो वस्तु का स्वरूप है आहाहा !

जो जिनस्वरूप है प्रभु ! उसका ध्यान अर्थात उसका आश्रय करना, वह तो पर्याय है। अर्थात पर्याय है और उसका विषय है वह त्रिकाली है। दो नयों का विषय विरुद्ध हो गया। समझे कुछ ? है ? दोनों नयों के विषय में विरोध है। जैसे कि सत्रूप हो वह असत्रूप न हो - ऐसा लोगों को ख्याल में आता है। यह पर्याय अपेक्षा असत् है, असत् अर्थात त्रिकाली में नहीं। आहाहाहा ! वस्तु अपेक्षा सत् स्वरूप है। जो सम्यग्दर्शन का विषय है। सम्यग्दर्शन है यह पर्याय है, परंतु उसका विषय है वह त्रिकाली ध्रुव है। जिनस्वरूप है, इसलिए जिनस्वरूप का ध्यान करने पर अथवा उसमें एकाग्रता होनेपर, उसे वीतराग पर्याय प्रगट होती है। यह वीतरागी पर्याय वह मोक्ष का मार्ग। आहाहाहा ! समझ में आया ?

वस्तु है यह तो वीतरागस्वरूप ही है। अब उसके ऊपर लक्ष्य गया, लक्ष्य गया किसका ? पर्याय का, अर्थात पर्याय और पर्याय का विषय दो नय हो गये। आहाहाहाहा ! एक सत् स्वरूप है वह ही असत्रूप है। पर्याय अपेक्षा से वह सत् नहीं। द्रव्य अपेक्षा से सत् है। आहाहाहा ! किस अपेक्षा से पर्याय-पर्याय अपेक्षा सत् है, परंतु त्रिकाली की अपेक्षा असत् है। स्वयं जो अविनाशी है तब पर्याय नाशवान है। समझे कुछ ? बहुत सूक्ष्म है यह ! यह समझे बिना पूरी जिंदगी जायेगी तो व्यर्थ जायेगी। आहाहाहा ! तीनलोक के नाथ सर्वज्ञ देव सर्वज्ञस्वभावी वस्तु से सर्वज्ञपना प्रगट किया, यह सर्वज्ञ स्वभाव वह तो नित्य है, परंतु प्रगट किया वह तो अनित्य है। (श्रोता :- वहीं का वही नित्य और वही का वही अनित्य) वही का वही अनित्य कहाँ - कहाँ

है ? उसके आश्रय से (जो) प्रगट किया वह अनित्य है - ऐसा कहा। सर्वज्ञ स्वभाव जो त्रिकाल है, वह नित्य है और उसके आश्रय से प्रगट होनेवाली पर्याय सर्वज्ञ वह अनित्य है। (श्रोता :- एक सर्वज्ञ में नित्यपना और उन्हीं सर्वज्ञ में अनित्यपना) यही कहते हैं न नय का विषय बापू !

वीतराग मार्ग - ऐसा है कोई अलौकिक और इसके अलावा कोई धर्म है ही नहीं कहीं, क्योंकि वस्तु की स्थिति इसप्रकार है। द्रव्य और पर्याय, एवं इसप्रकार जिसके मार्ग में नहीं इसमें पर्याय का धर्म, धर्मी त्रिकाली के आश्रय होता है इसमें द्रव्य और पर्याय दो वस्तुरूप है - ऐसा जिसमें नहीं, उसे कहीं धर्म हो सकता नहीं। समझे कुछ ? आहाहा ! शुद्धभाव अधिकार में नियमसार में नहीं आया, केवलज्ञान नाशवान है। ***केवलज्ञान नाशवान पर्याय है न ? आहाहा ! एक अपेक्षा परद्रव्य कहा परंतु है परद्रव्य पर्याय। यहाँ तो परद्रव्य कहा क्यों ? कि जैसे परद्रव्यमें से नई पर्याय आती नहीं, ऐसे धर्म की पर्याय में से नई पर्याय नहीं आती वह (अपने) द्रव्यमें से आती है। अतः स्वद्रव्य को द्रव्य कहा, और पर्यायमें से नई पर्याय आती नहीं, परद्रव्यमें से जैसे नहीं आती इसीप्रकार पर्यायमें से (पर्याय) नहीं आती, अतः पर्याय को परद्रव्य कहा, आहाहा ! - ऐसा मार्ग है।***

(श्रोता :- यह बात तो सच्ची परंतु धर्म कैसे हो ?) देखो यह क्या चलता है यह ?

कि धर्मी जो जिनस्वरूपी प्रभु वस्तु ! उसका आश्रय करने पर अर्थात कि इसका ध्यान करने से अर्थात कि इसका लक्ष्य करनेपर जो पर्याय प्रगट हो वह धर्म है। (श्रोता :- परंतु हमारे घर में पर्याय शब्द का प्रयोग ही नहीं होता) पर्याय शब्द का प्रयोग नहीं होता, भगवान के शासन में तो घर में प्रयोग होता है न यहाँ।

(श्रोता :- पैसा को द्रव्य कहा है) पैसा धूल में वहाँ कहाँ ? पैसा में वह परमाणु है, वह नित्य है और उसकी पर्याय अनित्य है। उसे अनित्य से नित्य का निर्णय करना - ऐसा उसमें है नहीं। वह वस्तु है नित्यानित्य, परंतु यह तो नित्यानित्य में, अनित्य नित्य का निर्णय करती है। इसलिये यह अनित्य भी वस्तु है और नित्य भी है। त्रिकाली को सत्य कहें तो पर्याय अपेक्षा असत्य कहने में आये। आहाहाहाहा ! ऐसी वस्तु है क्या हो... वस्तु का स्वरूप ही - ऐसा है, भगवान ने कुछ किया नहीं। जैसा है वैसा जानकर कहा है। आहाहा ! जो सत् हो वह असत् न हो - ऐसा लगे, परंतु त्रिकाली है वह सत् है और एक समय की पर्याय स्थाई रहनेवाली नहीं अतः असत् है। आहाहाहा ! भावार्थ है न ? चौथे श्लोक का ! पाँचवा तो अब आयेगा।

`एक हो वह अनेक न हो' देखो ! - ऐसा लगे परंतु वस्तु अपेक्षा एक है

और पर्याय अपेक्षा अनेक है। आहाहा ! यह अनेक न हो तो एक का निर्णय करे कौन ? आहाहाहा ! पर्याय अनेक है, ज्ञान की दर्शन की आदि अनेक है और यह पर्याय स्वयं भी एक समय की दूसरे समय की (दूसरी) इसप्रकार अनेक है। यह अनेकपना है, वह भी है, वह व्यवहारनय का विषय है और यह अनेक ने एक का निर्णय किया- ऐसा एक है, वह निश्चयनय का विषय है। आहाहा ! ऐसी बातें है बापू ! समझे कुछ ?

(श्रोता :- थोड़ा कठिन लगे) जिसे अभ्यास न हो उसे कठिन तो लगे, परंतु वस्तु तो यह है। वस्तु का स्वरूप है - ऐसा है - ऐसा न हो तो किसी प्रकार सत् और असत् की, द्रव्य और पर्याय की सिद्धि हो सके नहीं। समझे कुछ ? आहाहाहा ! यह त्रिकाल है यह तो है, परंतु त्रिकाल है यह जाननेवाली पर्याय है कि जाननेवाला त्रिकाली द्रव्य है ? आहाहाहा ! त्रिकाली भगवान आत्मा पूर्णानंद का नाथ प्रभु ! जो सम्यग्दर्शन का विषय, परंतु सम्यग्दर्शन है यह अनित्य है कि नित्य है। पर्याय है कि द्रव्य है ? स्थाई रहनेवाली है कि एक समय रहनेवाली है ? आहाहाहा ! समझे कुछ ? यह तो मूलतत्त्व का पता लगाने की बात है भाई ! हाँ आहाहा ! है यह श्लोक वस्तु का है। इसलिये यहाँ यह वस्तु का स्वरूप है। अतः यह दो नय ली है न ? और वह `विरोधध्वंसिनी' - ऐसा कहा न ! जो मूल श्लोक है देखो चौथा। `उभयनय विरोध ध्वंसिनि स्यात्पदांके जिनवचसि रमन्तें' आहाहाहा !

जिनवचन में द्रव्य और पर्याय वस्तु का स्वरूप है - ऐसा जिनवचन में दो नयों का विषय बताया (है)। ऐसे विरोधी है एक त्रिकाली रहनेवाला है, एक-एक समय की पर्याय है। एक अविनाशी है तब एक नाशवान है, इस प्रकार विरोध होने पर भी वस्तु का स्वरूप है। समझे कुछ ? आहाहाहा ! इस पर्याय को अरे ! मोक्ष का मार्ग जो है, यह पर्याय है और उसका विषय है वह द्रव्य त्रिकाली है यह त्रिकाली है तब एकरूप भगवान जिनस्वरूप एकरूप है और जिनस्वरूप का आश्रय लेकर, उसका ध्यान करे उसे ध्येय बनाकर जिसने पर्याय प्रगट की है, ऐसी पर्याय वह वीतरागी पर्याय है, यह वीतरागी पर्याय वह मोक्ष का मार्ग है, यह मोक्ष का मार्ग वह पर्याय है और उसका विषय है वह त्रिकाली ध्रुव है। आहाहाहाहा ! क्या हो ? अभी तो बहुत ज्यादा गड़बड़ हो गई है, अतः यह बात इसे पकड़ना कठिन लगे, हाँ ? आहाहा ! प्रथम तो अभ्यास नहीं करते, उसमें लिखा है। उसने (इतिहासकार) अभी वानियों को व्यापारियों को जैनधर्म हाथ आ गया भाई ! हाँ। आहाहा ! वानियाँ अकेला सारे दिन व्यवसाय धूल (पैसा) यह और वह और यह, विकल्प करते रहते। पर का करे नहीं। आहाहा ! वानियाँ को जैनधर्म मिला। यह जैनधर्म तो अलौकिक

चीज है। आहाहा ! जो इस व्यापार में उलझ गये है, उसे यह (अंदर का) व्यापार हाथ में न आये। आहाहाहा ! समझे कुछ ?

जिनवचन `विरुद्धध्वंसिनी' दो नयों का विरोध समाप्त कर देता है। क्योंकि दोनों का विषय विरुद्ध होनेपर भी दोनों वस्तु है। आहाहा ! दोनों है एक का विषय पर्याय है, और एक का विषय ध्रुव है, परंतु दोनों है। समझे कुछ ? आहाहा ! यहाँ तो सम्यग्दर्शन को प्रगट करना, यह वीतरागी पर्याय है, वीतरागी पर्याय है, यह वीतरागी मूर्ति प्रभु है। यह वीतरागी स्वरूप के लक्ष्य से और उसमें ध्येय और उसमें एकाग्रता होने पर सम्यग्दर्शन होता है। आहाहा ! धन्नालालजी ! आहाहाहा ! यह तो सरल भाषा में - ऐसी वस्तु है। लम्बी बातें बहुत हैं, परंतु वस्तु ऐसी है। आहाहा !

इसलिये कहा न ! बहुतबार कहते हैं कि `जिन सो ही आत्मा, जिन सो ही यह आत्मा अन्य सो ही कर्म, यही वचन से समझ ले जिनप्रवचन का मर्म।' जो कि श्रीमद् में इसको दूसरी तरह कहा है `जिन सो हि आत्मा' अन्य सो ही कर्म, कर्म कटे जिनवचन से (यही धर्म का मर्म) - ऐसा आया, परंतु इसका अर्थ यह कि वीतराग मूर्ति प्रभु आत्मा ! त्रिकाल वीतरागस्वरूप ही है, सर्वज्ञस्वरूप ही है, परमात्मस्वरूप ही है, आहाहा ! उसका आश्रय लेनेपर, उसको ध्यान का ध्येय बनाने पर, आहाहा ! उसे वर्तमान ज्ञान की पर्याय में ज्ञेय बनाने पर आहाहाहा ! जो पर्याय प्रगट होती है वह अनित्य है। कारण कि नहीं थी और हुई न ? और वह (द्रव्य) तो है, है न है। आहाहा ! समझे कुछ ?

कांतिभाई ! उस प्लास्टिक के क्रिस्टिल (पाऊडर) में कुछ हाथ आये - ऐसा नहीं यह। आहाहाहा ! बहुत पैसे पैदा होते हैं इसमें। धूल में पैसा नहीं। वह तो जड़ है पैदा हो तो क्या इसमें ? आहाहा ! इसके पास कहाँ आते है यह ? यह तो मुझे मिले ऐसी ममता आयी उसके पास। यह ममता भी एक पर्याय है, और ममता बिना की चीज है यह त्रिकाली द्रव्य है। आहाहाहा ! समझ में आया ? इसमे ***`आयेगा। बाद में आयेगा देखो ! `नित्य हो वह अनित्य न हो' - ऐसा लगे परंतु नित्य है, यह त्रिकाली है और उसका निर्णय करनेवाली पर्याय, यह नित्य है - ऐसा निर्णय करनेवाली पर्याय अनित्य है। यह विरोध है परंतु यह है। समझे कुछ ? आहाहा !***

`भेदरूप वह अभेदरूप न हो' वस्तु अभेद है उसमें पर्याय का भेद है। परंतु - ऐसा जाने अभेद हो, वह भेद न हो परंतु अभेद है यह पर्याय भेद है। यह, जो वस्तु का स्वरूप - ऐसा है। आहाहाहा ! और अभेद वस्तु है त्रिकाली प्रभु ! उसे पर्याय के भेद से उसका निर्णय होता है। अर्थात वीतरागी पर्याय से अभेद का निर्णय होता है, भले वीतरागी हो परंतु है पर्याय, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र यह

पर्याय है और यह पर्याय भेदरूप है और भेदरूप भी है, और उसका विषय अभेद भी है। - ऐसा लगे कि अभेद और भेद विरोधी है, अभेद हो वह भेद न हो, यह अभेद हो वह भेद न हो। परंतु साथ में दूसरी चीज न हो, यह अभेद हो वह भेद न हो। आहाहाहा ! यह तो भाई पहले तो जानने की बात है। आहाहा ! जिसप्रकार वस्तु स्वरूप है इसप्रकार ज्ञान न हो तब वह अंतर में नहीं झुक सके। आहाहा ! जैसा वस्तु का स्वरूप है, इसीप्रकार ज्ञान न हो, तब यह ज्ञान सत् ही नहीं, जब सच्चा ज्ञान हो, तब द्रव्य को त्रिकाली जाने, पर्याय को क्षणिक जाने। ***जानकर यह सच्चा ज्ञान - ऐसा जाने कि वस्तु त्रिकाल (है) पर्याय अनित्य है। तब उसका त्रिकाली ऊपर (लक्ष्य) जाय, उसका लक्ष्य त्रिकाली ऊपर जाय। आहाहा ! यह लक्ष्य है यह सम्यग्दर्शन और ज्ञान है।*** आहाहाहा !

यह तो चौथे श्लोक का भावार्थ गंभीर है। है ? शुद्ध हो वह अशुद्ध न हो, त्रिकाली भगवान शुद्ध है वह अशुद्ध न हो परंतु पर्याय में अशुद्ध हो। अशुद्ध पर्याय जो न हो तब उसे वेदन में शुद्धआनंद आना चाहिए। तब पर्याय में जब आनंद का वेदन नहीं कि जो आनंद की पर्याय ध्रुव के आश्रय हो ऐसी नहीं, तब यह पर के लक्ष्य से हो ऐसी अशुद्ध पर्याय है। आहाहा ! यह तो बापू ! थोड़ी निवृत्ति लेकर... हाँ ! आहाहा ! अनंतकाल से इसने एक समय मात्र भी, सम्यग्दर्शन क्या चीज है ? प्रगट किया नहीं बापू ! यह चीज कैसी हो भाई ! यह कोई सरलता से प्रगट हो - ऐसी वस्तु नहीं। आहाहा !

यह शास्त्रज्ञान है, यह परलक्षी अनित्य है और स्वरूप का ज्ञान है यह स्वलक्षी, परंतु है ज्ञान अनित्य। सम्यग्ज्ञान है यह अनित्य है, यह पर्याय। आहाहा ! और वस्तु है, यह शुद्ध है। वस्तु है, यह वस्तु है वह अपूर्ण न हो, अशुद्ध न हो, आवरण न हो, विकृत न हो, वस्तु है यह वस्तु पवित्रता का पिण्ड प्रभु है, परंतु इसका जिसे लक्ष्य नहीं। इसका जिसने अनादि से आश्रय नहीं (लिया) इसलिये उसे परद्रव्य का आश्रय है, पर्याय में। (परका) आश्रय है अतः वहाँ अशुद्धता होती है। यह अशुद्धता भी है, पर्याय में अशुद्धता है। वस्तु शुद्ध है। आहाहा !

(श्रोता :- क्षणभर में शुद्ध क्षणभर में अशुद्ध) क्षणभर में और क्षणभर में किसे, उसे न उसे अशुद्ध कहाँ कहा ? जिसे शुद्ध कहा उसे अशुद्ध कहाँ कहा ? शुद्ध है वह तो शुद्ध ही है, परन्तु उसके आश्रय से जैसी पर्याय होना चाहिए, वह नहीं हैं, `अर्थात शुद्ध नहीं। इसलिये वह पर के आश्रय से अशुद्ध है। यह वस्तु का स्वरूप है। आहाहाहाहा ! कहो देवीलालजी ! यह तो लौजिक से बात चलती है। आहाहाहा ! प्रभु का मार्ग है वीरो का, ये कायर का वहाँ काम नहीं बापा ! आहाहाहा ! शुद्ध

हो वह अशुद्ध न हो - ऐसा विरोध दिखे इत्यादि, (दोनों) नयों के विषय में विरोध है। जिनवचन कथंचित विवक्षा से किसी अपेक्षा से, विवक्षा अर्थात किसी अपेक्षा से ? किसी अपेक्षा से सत् किसी अपेक्षा से असत् ? त्रिकाली की अपेक्षा से यह नित्य, वर्तमान की अपेक्षा अनित्य। त्रिकाली की अपेक्षा शुद्ध, वर्तमान की अपेक्षा से अशुद्ध। - ऐसा अनादि से है। - ऐसा सत् असत्रूप, एक अनेकरूप, नित्य-अनित्यरूप, भेद-अभेदरूप, शुद्ध अशुद्धरूप, जिसप्रकार विद्यमानवस्तु है, फिर इसप्रकार। वस्तु यह विद्यमान है, और उसकी पर्याय भी विद्यमान है। व्यवहारनय का विषय है कि नहीं ? नय है ज्ञान का अंश तब उसका विषय विद्यमान है कि नहीं। पर्याय के रूप में विद्यमान है। द्रव्य अपेक्षा विद्यमान द्रव्य है।

कठिन बात है बापू ! मार्ग - ऐसा है कोई, अभी तो क्रिया-काण्ड के कारण कुछ सूझता नहीं। व्रत पालो और भक्ति करो और यह करो एवं वह करो न यह सभी अशुद्ध विकारी भाव, जो पर के लक्ष्य से होता है, यह व्यवहारनय का विषय है। जिसे निश्चय का विषय जब प्रगटा नहीं तब उसे व्यवहारनय का विषय भी (उसे) नहीं। यह तो एकांत अज्ञान है। आहाहाहा ! क्या कहा यह ? कि पराश्रित जितना व्रत, नियम, भक्ति, पूजा आदि का भाव जो राग है और यह सभी परलक्षी, यह दशा परदिशा तरफ झुकनेवाली दशा है। तब आत्मा जो है वह त्रिकाली शुद्ध है उस तरफ झुकनेवाली जो दशा हो तब तो यह शुद्ध हो, तब उसकी ओर झुकाववाली दशा नहीं तो तब पर के लक्ष्यवाली पर दिशा तरफ परणति ढलती है, ऐसी अशुद्धता की सत्ता है। धन्नालालजी ! मोहनलालजी ! पकड़ में आये - ऐसा है धीरे धीरे हाँ ! व्यापारी व्यापार में ऐसे उलझ गये और यह पूरा मार्ग कोई (अलग)... आहाहा !

जिसप्रकार विद्यमान वस्तु है, देखो ! त्रिकाली अपेक्षा नित्य, विद्यमान है, पर्याय अपेक्षा अनित्य विद्यमान है। त्रिकाली अपेक्षा शुद्ध विद्यमान है, पर्याय अपेक्षा अशुद्ध विद्यमान है, अशुद्ध है। अशुद्धता न हो तो उसे आनंद की दशा का वेदन होना चाहिए, वह नहीं, तब इसे दुःख का वेदन है, अशुद्धता का, यह भी है। आहाहा ! (श्रोता :- पैसा कमाते है इसमें कहीं दुःख का वेदन नहीं।) कमाने का भाव ही दुःख है। आहाहा ! यह गिनने का भाव ही दुःख है, कि यह पच्चीस लाख मिले और दश लाख मिले और धूल मिली न ! यह तो पाप ही है। आहाहाहा ! परंतु यह है, पाप ही है गिनो तो यह। आहाहाहा ! परलक्षी के भाव ही करते रहते हीं बहुधा तो, २२ घण्टे, २३ घण्टे। आहाहा !

सत् समागम में और सत्शास्त्रों के पढ़ने परिचय में आये दो-चार घण्टे तो वहाँ शुभभाव हो, धर्म बाद में। परंतु शुभ भी है अशुभ भी है। इसप्रकार विद्यमान है उसका

विषय बताया है, ज्ञान कराया है। आहाहा ! इसप्रकार... जिसप्रकार विद्यमान वस्तु है यह सर्वज्ञ के अलावा, वीतराग के अतिरिक्त यह वस्तु कहीं हो सके नहीं। समझे कुछ ? क्योंकि वीतराग ने वीतरागी पर्याय प्रगट की। वह वीतरागी द्रव्य के आश्रय से, यह दो वस्तु उसे उसके ज्ञान में आयीं और जैसा आया वैसा उनके कथन में (आया) कहा, आहा ! वाणी में आया। यह वाणी में आई ऐसी यह विद्यमानवस्तु और जो है इसप्रकार, उसे बताया। आहाहा ! समझे कुछ ?

... कहकर विरोध मिटा देती है, देखा ! जिसप्रकार विद्यमान... त्रिकाली अपेक्षा त्रिकाल विद्यमान है, पर्याय अपेक्षा पर्याय भी विद्यमान है। है न ? व्यवहारनय का विषय है कि विषय नहीं ? तब नय किसकी ? आहाहाहा ! पर्याय भी व्यवहार नय का विषय है, और त्रिकाल निश्चयनय का विषय है। यह विरोध होने पर भी दोनो अपेक्षायें है। आहाहा ! एक व्यक्ति को धर्म करना है, तब उसका अर्थ यह हुआ कि उसकी पर्याय में अधर्म है। द्रव्य में कहाँ है ? तब उसे पलटना है न ! इस पलटनेवाली अवस्था में अधर्म है न ? जो पलटती दशा में अधर्म न हो तब तो धर्म होना चाहिए। तब उसे धर्म करना यह रहता नहीं। आहाहा !

मुझे धर्म करना है इस शब्द में तीन ध्वनि (प्रश्न) उठे। एक तो वर्तमान (में) अधर्म है, उसे हटाकर धर्म उसकी दशा में लाना है दो, और धर्म लाना है उसका आश्रय वस्तु द्रव्य है। आहाहा ! धर्म की पर्याय का आश्रय (दाता) परद्रव्य नहीं। समझे कुछ ? आहाहाहा ! धर्म की पर्याय का आश्रय द्रव्य है ? क्योंकि धर्म जो वीतरागी पर्याय है, धर्म यह वीतरागी पर्याय है, मोक्षमार्ग यह वीतरागी पर्याय है। यह वीतरागस्वरूप जो त्रिकाली है उसके आश्रय से होती है। अर्थात दोनों सिद्ध हो गये। त्रिकाली जिनस्वरूप भी है और उसके आश्रय से हुई पर्याय... आहाहाहा ! यह भी है (वह भी है) दोनों विद्यमान है। इसलिये वर्तमान पर्याय के विषय को व्यवहार कहा, (है) (और) त्रिकाली को विषय बनानेवाला, उसे निश्चय कहा, दोनों वस्तु है।

वेदांत अकेले द्रव्य को मानें, परंतु वह द्रव्य है और दुःख से मुक्त हो - ऐसा जो कहा कि भाई एकरूप है - ऐसा निर्णय करो ! परंतु एकरूप है नहीं - ऐसा निर्णय तो है। तब उस पर्याय में द्वैतपना भी आ गया और एकरूप (का) निर्णय करने जाता है। अनेकरूप माना था यह दूर किया और एक हूँ - ऐसा (निर्णय) यह तो पर्याय में आया हाँ ? हटाना और होना यह तो पर्याय में आता है हटाना और होना यह ध्रुव में नहीं होता, आहाहा ! इसलिए - ऐसा कहते हैं... भगवान जिनवचन जिसप्रकार है उस प्रकार कहते हैं, क्या कहा ? जिनवचन पहले कहा न ! वहाँ जिनवचन कथंचित किसी अपेक्षा से, कहकर विरोध मिटा देते हैं। आहाहा !

बापू यह तो समयसार है। आहा ! हाँ ? यह तो अभी शुरूआत की बात है। आहाहाहा ! और - ऐसा द्रव्य और पर्याय, एवं शुद्ध और पर्याय अशुद्ध, एवं द्रव्य शुद्ध और फिर पर्याय भी शुद्ध - ऐसा कहाँ है ? (जिनवचन में है) समझ में आया ? आहाहा !

और वह द्रव्य जो शुद्ध है, त्रिकाली भगवान है, उसका लक्ष्य करता है, तब उसे शुद्धपर्याय प्रगट होती है। यह प्रगट हुई है यह पर्याय है। प्रगट होना जिसमें नहीं यह तो ध्रुव त्रिकाली है। जयसुखभाई ! - ऐसा सूक्ष्म है बापू ! आहाहा ! वकीलात में सभी बेकार है वहाँ। यह तो वीतरागी वकालात है है बापा ! इसके नियम और इसके कायदे। आहाहा ! जिनवचन `कथंचित्' विवक्षा त्रिकाली की अपेक्षा नित्य है, वर्तमान की अपेक्षा अनित्य है - ऐसा कहने से विरोध मिट जाता है। समझे कुछ ?

इसमें तो भाई दिमाग को चलाना चाहिए। यह तो वीतरागसर्वज्ञ परमेश्वर जैन परमेश्वर का जैनधर्म, यह जैन धर्म अर्थात क्या ? जो जिनस्वरूप त्रिकाल है भगवान, उसके आश्रय से हुई दशा वह जैनधर्म... और पर के लक्ष्य से हुआ वह अधर्म चाहे तो दया, दान, व्रत, भक्ति हो, परंतु है तो यह अधर्म, क्योंकि स्व चैतन्यभगवान वीतरागमूर्ति प्रभु उसके आश्रय से तो जो दशा हुई नहीं। यह तो व्रत एवं तप तथा भक्ति और पूजा एवं ब्रह्मचर्य हम शरीर से ब्रह्मचर्य पालते है। अरे ! शरीर अर्थात जड़ आहा ! इससे ब्रह्मचर्य पालना अर्थात क्या ? यह तो विकल्प है, शुभराग है। आहाहा ! (श्रोता :- ब्रह्मचर्य किसे कहना ?) ब्रह्म अर्थात आत्मा आनंद का नाथ उसमें लीनता अर्थात रमना उसका नाम ब्रह्मचर्य है।

उसमें आया था कल नहीं ? अनुभूति वह जैनधर्म है। और (आत्म) अनुशासन, उसमें यह आया था भाई ! अनुशासन अर्थात कि इसमें रमना। आहाहा ! आनंद स्वरूप को दृष्टि में लिया है उसमें रमना, यह संयम है। आहाहाहा ! यह संयम भी पर्याय है। आहाहा ! क्योंकि नईदशा प्रगटी है, प्रगटे वह गुण न हो, द्रव्य न हो, द्रव्य और गुण तो त्रिकाल रहते है। आहाहा ! बदले नाश हो और उपजे यह तो पर्याय में होता है, आहाहा ! इसलिये केवलज्ञान भी उत्पन्न होता है यह पर्याय है। आहाहा ! यह जिनवचन... आहाहा !

किसी अपेक्षा कहने से त्रिकाल को नित्य कहा और पर्याय को अनित्य कहा, त्रिकाल को शुद्ध कहा पर्याय को अशुद्ध कहा। इस अपेक्षा दो नयों का विषय विरुद्ध होने पर भी (विरोध) मिटा देता है। - ऐसा होता है, इसप्रकार होता है। झूठी कल्पना करता नहीं। वीतरागी वाणी कहीं कल्पना से हुई नहीं, यह तो सत् है इसप्रकार वाणी आयी है। आहाहा !

जिनवचन द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक दो नयों में द्रव्यार्थिक अर्थात त्रिकाली द्रव्य,

उसे जाननेवाला नय और पर्याय अर्थात वर्तमान अवस्था को जाननेवाला नय और पर्यायार्थिक, दोनों नयों में प्रयोजनवश, आवश्यकता के कारण अपने लाभ के कारण, शुद्ध द्रव्यार्थिकनय को मुख्य करके... आहाहा ! अपना प्रयोजन सुख का है। इस सुख की प्राप्ति के कारण शुद्ध द्रव्यार्थिकनय को मुख्य करके वह है - ऐसा कहा है। आहाहा ! समझे कुछ ? आत्मा का प्रयोजन तो सुखी होने का है न ? सुखी होने के प्रयोजन के लिये शुद्ध द्रव्यार्थिकनय को मुख्य करके उसे निश्चय कहा, वह है वह सत् है - ऐसा कहा... और अशुद्ध द्रव्यार्थिकरूप। अर्थात क्या ? ***अशुद्ध है वह व्यवहार का विषय यह पर्यायार्थिक, परतुं यह द्रव्य स्वयं पर्यायरूप (से) अशुद्धरूप परिणमा है। पर्यायरूप हाँ, इसलिए अशुद्ध द्रव्यार्थिकनय कहा। कर्म के कारण नहीं, पर के कारण नहीं। यह द्रव्य स्वयं पर्याय में अशुद्धरूप परिणमा है। यह पर्याय में हाँ ! द्रव्य स्वयं अशुद्ध होता नहीं। आहाहा ! यह द्रव्य स्वयं पर्याय में अशुद्धरूप... अशुद्ध द्रव्यार्थिकरूप उसे कहा। विकाररूप परिणमता है जो पर्याय उसे अशुद्ध द्रव्यार्थिक कहा अर्थात जो द्रव्य है उसकी यह पर्याय है। परंतु यह अशुद्ध है। इसलिए उसे अशुद्ध द्रव्यार्थिक कहा, यह अशुद्ध द्रव्यार्थिक स्वयं पर्याय है। आहाहा !***

इस पर्यायार्थिक नय को गौण करके नहीं - ऐसा नहीं, परंतु इसे गौण करके, और त्रिकाली को निश्चय को मुख्य करके और उस (पर्याय को) व्यवहार कहते हैं। आहाहाहा ! पर्याय मात्र होनेपर भी, अशुद्धता होनेपर भी, उसे गौण करके व्यवहार कहते हैं। और त्रिकाली को मुख्य करके निश्चय कहते हैं, त्रिकाली को मुख्य करके पर्याय को `नहीं' - ऐसा कहते नहीं... गौण करके नहीं - ऐसा कहते हैं। आहाहा ! समझे कुछ ?

अब ऐसी फुरसत कहाँ, इसमें लेना ? बहनों को सारे दिन धंधा, पकाना (रसोई) सूपा से साफ करना और पापड़ करना, क्या कहलाये बड़ी, और बालबच्चों को सम्हालना, स्कूल जाने के पहले उन्हें बनाकर खिलाना (पहले) अन्यथा समय हो जाय, आहाहा ! अरेरे ! ऐसे समय में यह कहाँ निर्णय करना - ऐसा सभी। और समय तो चला जाता है प्रभु ! आहाहा !

ऐसे जिनवचन में जो पुरुष रमन करते (है) ऐसे अर्थात ? व्यवहारनय को गौण करके और द्रव्य को मुख्य करके, द्रव्य में जो रमते हैं। - ऐसा कहने का आशय है। इसका अर्थ - ऐसा करते है कि दोनों नयों में रमण करना, जिनवचसि जिनवचन में दो नय कहे है। परंतु दो नय में एकनय को गौण करके और एकनय को मुख्य करके उसमें रमना है। समझे कुछ ? आहाहा ! क्योंकि रमना है यह तो पर्याय है, जिसमें रमना है यह द्रव्य है समझे, कुछ ? इसलिये वह पर्याय का...

पर्याय पर से लक्ष्य छुड़ाने, पर्याय को गौण करके व्यवहार कहा और त्रिकाली को मुख्य करके निश्चय कहा। - ऐसा त्रिकाली जो आत्मा ध्रुव नित्यानंद प्रभु यह जिनवचन में उपादेयरूप कहा है। कलश टीका में है, 'जिनवचसिरमन्ते' इसका अर्थ यह किया है - यह जिनवचन में त्रिकाली द्रव्य उपादेय कहा है। धन्नालालजी !

(श्रोता :- दोनों नयों को न छोड़ना चाहिए - ऐसा भी कहा है न ?) ***नय है न ? नहीं ? है इसलिए छोड़ना नहीं चाहिए। गुणस्थान भेद नहीं ? समकित ज्ञानादिक भेद है कि नहीं ? है इसलिए छोड़ना नहीं चाहिए, नहीं - ऐसा नहीं। परंतु है अतः आश्रय करने लायक है - ऐसा नहीं।*** आहाहा ! ऐसे जिनवचन में जो... अर्थात कि, जो द्रव्यार्थिक को मुख्य करके कहा, ऐसे जिनवचन में जो आया - ऐसा नित्यानंद प्रभु में जो रमण करता (है) आहाहाहा ! सहजात्म स्वरूप सहजरूप से पलटती अवस्था भी जहाँ नहीं - ऐसा सहजात्मस्वरूप। शुद्ध जिनबिम्ब प्रभु ! यही उपादेय है - ऐसा जिनवचन में कहा है। आदरणीय और सत्कार करने जैसा हो ग्रहण करने जैसा हो, तो यह शुद्ध त्रिकाली द्रव्य है। आहाहाहा ! समझे कुछ ?

बात सूक्ष्म निकालना और फिर समझे कुछ कहना... परंतु मार्ग तो - ऐसा है बापा भाई ! अभी तो बिखर गया है। आहाहा ! अभी तो व्रत, तप, भक्ति, पूजा और उपवास एवं परिषह सहन करो इन सभी से कल्याण होगा तुम्हारा। आहाहा ! यह सहन करते हैं यह कहाँ रुंधा हुआ क्रोध है न 'बहिन' ने लिखा ? कठिन काम भाई ! यह किसी व्यक्तिगत कुछ नहीं, अपन को तो सत्यरूप वस्तु क्या... व्यक्ति की जिम्मेदारी तो स्वयं की है, उल्टे परिणाम का फल तो उसे वेदना (भोगना) है न ? दूसरा क्या है ? आहाहा ! किसी के प्रति विरोध नहीं, आनादर नहीं, तिरस्कार नहीं, वह प्रभु हैं। भगवान ! अरे रे ! उसे विरोध करने के भाव में... विरोध (में) दुःख का फल आयेगा बापू ! आहाहा ! उसके प्रति अनादर नहीं करना चाहिए। करुणा लाना चाहिए। आहाहाहा !

यहाँ तो प्रभु - ऐसा कहते हैं कि जिनवचन में - ऐसा जिनवचन कैसा ? कि मुख्य को निश्चय कहें और पर्याय को गौण करके व्यवहार कहा, ऐसे जिनवचन में अर्थात ऐसी मुख्य वस्तु है उसमें रमते (है)। गौण करके व्यवहार कहा न, व्यवहार छोड़ने लायक है। आहाहाहा ! समझे कुछ ? कांतिभाई ! इसमें कहाँ फुरसत मिले ? ऐसी बात को। आहाहा ! अरे रे ! उसे करने जैसा प्रभु ? दूसरे माने न मानें समझे... इसके साथ कुछ संबंध नहीं।

स्वयं भगवान ! पूर्णानंद का नाथ जिनस्वरूपी ! उसका आश्रय कराना उसे मुख्य करके वही है - ऐसा कहा। उसे मुख्य करके वही है - ऐसा कहा और

पर्याय है उसे गौण करके वह नहीं - ऐसा कहा। आहाहाहा ! समझे कुछ ? ऐसे पुरुष इस शुद्धात्मा को यथार्थ प्राप्त करते हैं। आहाहा !

वास्तव में तो जो शुद्धपर्याय सम्यग्दर्शन है, वह स्व के लक्ष्यसे होता है। फिर भी वह द्रव्य से होता नहीं, पर्याय से पर्याय होती है। समझे कुछ ? जो समकित का उत्पाद हुआ इस उत्पाद को ध्रुव का भी आश्रय नहीं, उत्पाद को व्यय का आश्रय नहीं, उसे ध्रुव का आश्रय नहीं, यह तो स्वतंत्र उत्पाद हुआ है। आहाहा ! समझे कुछ ? क्योंकि शास्त्र में तो - ऐसा कहा १०१ गाथा प्रवचनसार, उत्पाद को ध्रुव का आश्रय नहीं उत्पाद को व्यय का अवलम्बन नहीं, कि व्यय हो अतः उत्पाद होता है, ध्रुव है अतः उत्पाद होता है। आहाहाहा ! पर्याय भी... सम्यग्दर्शन ज्ञान यह पर्याय है और उत्पादरूप है और वह सत् है। यह सत् का इतना फर्क कि इस पर्याय का लक्ष्य इस तरफ जाता है इतना, परंतु उसे द्रव्य का आश्रय मिला अतः पर्याय हुई - ऐसा नहीं।

(श्रोता :- बहुत कठिन लगेगा यह।) हाँ ? वस्तु स्थिति gfतो ऐसी है। आहाहा ! दूसरा क्या करें ?

अनादि का अभ्यास नहीं, और यह अभ्यास राग और द्वेष एवं आहाहा ! पुण्य-पाप का, पर का अभ्यास है नहीं, पर का तो कर सकते नहीं, विकार का अभ्यास है अनादि से शुभ और अशुभ भाव का, और वह भी शुभाशुभ पर्याय परंतु उसे अपने समय उत्पन्न होने में जिसे कर्म की अपेक्षा नहीं, ध्रुव की अपेक्षा नहीं। आहाहाहा ! कठिन लगता था, अभी तो बड़ा-बड़ा पण्डित चक्कर खाते हैं। नहीं, विकारी पर्याय कर्म के कारण होती है। अन्यथा स्वभाव हो जायेगा। ***भाई पर्याय का उस प्रकार का उस समय की उत्पत्ति का काल है उस समय होता है। आहाहाहा ! जिसकी पर्याय विकारी है मिथ्यात्व की, उसे द्रव्य का आश्रय नहीं, उसे पूर्व पर्याय का आश्रय नहीं। उसी प्रकार निमित्त का आश्रय नहीं। आहाहाहा ! - ऐसा वस्तु का स्वरूप ही इस प्रकार है। इसप्रकार न जाने वह विपरीत दृष्टि है। समझे कुछ ?***

जो कोई जिनवचन अर्थात आत्मा में रमता है, अर्थात कि त्रिकाली ज्ञायक स्वरूप भगवान, उसके तरफ जिसका लक्ष्य जाता है। बस ! इतना फर्क। वह शुद्धात्मा को यथार्थ पाते हैं। आहाहा ! वह शुद्धात्मा को जैसा है उसप्रकार पाते हैं।

विशेष कहेंगे...

- प्रमाण वचन गुरुदेव !